International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182 Print ISSN: 2349-5979
Impact Factor: RJIF: 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 2; February 2016; Page No. 13-15

रस निष्पत्ति में साधारणीकरण की भूमिका

डॉ. शिवदत्त शर्मा

पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, ढलियारा, कांगडा, हि.प्र. ।

वस्तुतः भारतीय काव्य शास्त्र की लम्बी एवं प्राचीनतम परम्परा होने के कारण पाश्चात्य काव्य शास्त्र में भी इसके अनेक तत्व समान दिखाई देते हैं, सम्भव है कि पाश्चात्य काव्य शास्त्र अनेक पक्षों में भारतीय काव्य–शास्त्र का ऋृणी हो, क्यों कि काव्य शास्त्र के विभिन्न पक्षों का जिस प्रकार विश्लेषण एवं सांगोपांग वर्णन भारतीय काव्य शास्त्र में हुआ है वैसा अन्यत्र नहीं मिलता। अनेक जटिल विषयों का समाधान भारतीय काव्य शास्त्र में बडी विद्वता एवं तर्क से किया गया है। काव्य शास्त्र के अनेक पक्षों के अतिरिक्त रस–विवेचन भी अद्भुत ढंग से हुआ है। तर्क वितर्क से जटिल विषय भी सरल एवं सुगम्य बन गया है।

रसविवेचन भारतीय काव्य शास्त्र में परम्परागत ढंग से विश्लेषित एवं चर्चित रहा है। पक्ष–प्रतिपक्ष एवं उसकी आलोचना ने इस विषय को इतना स्पष्ट कर दिया है कि दुरुह होते हुए भी इसे तर्क पूर्ण ढंग से समझा जा सकता है। साधारणीकरण शब्द के सही अर्थ को जाने बिना इस के समीचीन भाव तक पहुंचना कठिन है। वस्तुतः सामान्य अर्थ में असाधारण का साधारण हो जाना ही साधारणीकरण कहलाता है। काव्यशास्त्र एवं रस निरूपण की दृष्टि से व्यक्ति का निर्वैयक्तिकरण होना अर्थात् देशकाल तथा वातावरण की सीमाओं से मुक्त होना। साधारण अर्थ में कहा जा सकता है कि साधारणीकरण वह सामान्यीकृत अनुभव है, जिसमें वस्तुएं स्थान और काल की उपाधि से मुक्त होकर निर्वैयक्तिक रूप में दिखाई पडती हैं और अनुभूत होने लगतीं हैं।

भारतीय काव्य शास्त्र में साधारणीकरण शब्द का प्रयोग जिस रूप में होता है, उसका सीधा संबन्ध रस–निष्पत्ति की वैज्ञानिक प्रक्रिया से है।साधारणीकरण के बिना रस–निष्पत्ति असम्भव है। इसके अभाव में रसनिष्पत्ति की प्रक्रिया अपूर्ण तथा अतार्किक रह जाती है।

डॉ नगेन्द्र ने साधारणीकरण को इस प्रकार स्पष्ट किया है– काव्य के पठन द्वारा पाठक या श्रोता का भाव–सामान्य–भूमि पर पहुंच जाना ही साधारणीकरण है।[1]

साधारणीकरण की अवधारणा

वस्तुतः भारतीय काव्य शास्त्र में रसनिष्पत्तिः एवं साधारणीकरण पर विशद् चर्चा हुई है। सर्वप्रथम आचार्य भारतमुनि ने इस सम्बन्ध में एक सूत्र दिया–विभावानुभावव्यभिचारि संयोगाद्रस निष्पत्तिः।[2] भरत मुनि के इस सूत्र में संयोग और निष्पत्ति पर अनेक विद्वानों में पर्याप्त मतभेद मिलता है। सभी ने अपने अपने ढंग से इसकी व्याख्या की है। इस में चार विद्वानों भटटलोलट, शंकुक, भटटनायक तथा अभिनव गुप्त का नाम विशेष उल्लेख्य है। इन चारों विद्वानों में से भटटलोलटट तथा शंकुक ने साधारणीकरण की ओर कभी संकेत नहीं दिया था। केवल भटट्नायक ही ऐसे पहले आचार्य थे, जिन्होंने साधारणीकरण की अवधारणा की। आचार्य भरतमुनि ने भी सीधे रूप में साधारणीकरण के विषय में स्पष्ट नहीं कहा अपितु अप्रत्यक्ष रूप से साधारणीकरण की बात की है। यथा–एभ्यःच सामान्यगुणयोगेन रसाः निष्पद्यन्ते। अर्थात् जब ये भाव सामान्य रूप से अनुभूति का विषय बनते हैं, तभी रस–निष्पत्तिः होती है। यहां सामान्य शब्द में ही साधारणीकरण का मूल छिपा हुआ है। वस्तुतः भट्टनायक ही स्पष्ट रूप से साधारणीकरण की अवधारणा के प्रवर्तक हैं।

साधारणीकरण के विषय में विभिन्न मत

साधारणीकरण न केवल संस्कृत के ही आचार्यों के विवेचन का विषय रहा है अपितु हिन्दी के भी अनेक आचार्यों नें इस विषय पर चर्चा की है। साधारणीकरण के विषय में विभिन्न आचार्यों के मतों पर विचार करना आवश्यक है। विभिन्न आचार्यों के मत इस प्रकार हैं–

1. आचार्य भरत मुनि

जैसा कि पूर्व भी वर्णित है कि भरत मुनि ने स्वयं स्पष्ट रूप से साधारणीकरण शब्द का प्रयोग नहीं किया है, परन्तु अपरोक्ष रूप में वे इस ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि कवि या नाटककार भावों को इस प्रकार अभिव्यक्त करता है कि वे सामाजिक की सामान्यानुभूति के विषय बन जाते हैं।[3]

2. भट्ट नायक

वस्तुतः भट्टनायक ही ऐसे पहले आचार्य हैं जिन्होंने भरतमुनि के रस–सूत्र में निहित संयोग तथा निष्पत्ति शब्दों की विस्तृत व्याख्या करते हुए साधारणीकरण शब्द का प्रयोग किया और इस अवधारणा को जन्म दिया, इसी लिए उन्हें प्रत्यक्ष रूप से साधारणीकरण शब्द का प्रयोग करने वाला प्रथम आचार्य माना गया है। उनका कोई स्वतन्त्र ग्रंथ उपलब्ध नहीं होता फिर भी काव्य–प्रदीप के उदाहरण के अनुसार उनका मत सामने आता है–

> भावकत्वं साधारणीकरणंम्,
> तेन हि व्यापारेण विभावादयः स्थायिनः क्रियन्ते।

इस का भाव यह है कि भावकत्वं ही साधारणीकरण है। इस व्यापार के द्वारा स्थायीभाव, विभाव, आदि का साधारणीकरण होता है। भट्ट नायक ने भावकत्व–प्रक्रिया के माध्यम से साधारणीकरण का उल्लेख किया है।[4]

आचार्य अभिनवगुप्त ने अपनी कृति अभिनव भारती में उनके मत को इस प्रकार उद्धृत किया है

विभादि साधारणीकरणात्मकता अभिघातो द्वितीयेनाशेन भावकत्व व्यापारेण भाव्यमानो रसः....भोगेन परं भुज्यते इति। अर्थात् रस भोग्य रूप अर्थात् आस्वादनीय है। अभिधा शक्ति से विलक्षण भावकत्वं व्यापार द्वारा विभावादि का साधारणीकरण होता है।[5]

भट्टनायक ने भरत मुनि के रस–सूत्र में वर्णित संयोग तथा निष्पत्ति का अर्थ क्रमशः भोज्य–भोजक तथा भुक्ति ग्रहण किया है। उन्होने रस निष्पत्ति की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए

साधारणीकरण शब्द का प्रयोग किया है। वे मानते हैं कि रस–निष्पत्ति में शब्द की तीन प्रक्रियाओं–अभिधा, भावकत्व, तथा भोजकत्व को आधार बनाया है। अभिधा प्रक्रिया में प्राप्त अर्थ तो हमारे भौतिक ज्ञान तक सीमित रहता है, परन्तु भावकत्व प्रक्रिया के अन्तर्गत सहृदय की भावना का उद्वेलन होने लगता है। इस तरह भावकत्व द्वारा ही विभावादिक, साधारणीकरण होता है, जिसके परिणाम स्वरूप सहृदय अपने वैयक्तिक सुख–दुख, हर्ष–विषाद आदि को त्याग कर सामान्य रूप धारण कर रस का आस्वादन करता है। इसलिए स्पष्ट है कि भटटनायक के अनुसार साधारणीकरण भावकत्व प्रक्रिया का प्राण है और इसी के द्वारा स्थायी भाव रसरूप में परिणत होता है। इस तरह भट्ट नायक ने साधारणीकरण को रसास्वाद से पूर्व की प्रक्रिया स्वीकार किया है।

3. आचार्य अभिनव गुप्त

उपरोक्त दोनों आचार्यों के बाद आचार्य अभिनवगुप्त ने साधारणीकरण के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने भट्टनायक के स्थापित मत में संशोधन करके साधारणीकरण की अवधारणा को अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। उन्होंने साधारणीकरण के बारे में अपना मत इस प्रकार प्रस्तुत किया हे–

तस्यां च यो मृगपोतकादिर्भाति तस्य विशेषरूपत्वाभावाद्भीत इति।
त्रासकस्यापारमार्थिकत्वाद् भयमेव परं देशकालद्यनालिगिंतम्।। [6]

अभिनव गुप्त के अनुसार काव्य की उस प्रतीति में जो मृग–शावक आदि विषय रूप से भासता है, उसके विशेष रूप न होने से, यह भीत है– यह ज्ञान तथा त्रासक के वास्तविक न होने से, भय ही देशकाल आदि से पूर्णतः असम्बद्ध रूप में प्रतीत होता है। अभिनव गुप्त के अनुसार आश्रय और आलम्बन का साधारणीकरण हो जाने से स्थायी भाव ही देशकाल के बन्धन से मुक्त हो जाता है। उनके अनुसार काव्य में स्थायी भाव सभी प्रकार के व्यक्ति–संसर्गों से मुक्त हो जाता है। अभिनव गुप्त के अनुसार विभावादि का साधारणीकरण न होकर स्थायी भाव का भी होता है। जिस प्रकार स्थायी भाव के कारण विभावादि होते हैं, ठीक उसी प्रकार स्थायी भावों के साधारणीकरण के कारण विभावादि का साधारणीकरण होता है। उनके अनुसार स्थायीभावों के साधारणीकरण का अर्थ है– देशकाल के बंधन, व्यक्ति–संसर्ग आदि से मुक्ति। व्यक्ति–चेतना के न होने पर सहृदय में इन्द्रियों के सुखदुख की भावना भी नष्ट हो जाती है। अभिनव गुप्त के अनुसार भाव का साधारणीकरण वैयक्तिक न हो कर सामूहिक प्रक्रिया है। इसमें प्रमाता ही भावमुक्त नहीं होता, बल्कि समस्त सामाजिक एकाग्रचित होकर मुक्त भाव का सामूहिक रूप से अनुभव करते हैं।[7]

4. धनंजय

पूर्ववर्ती आचार्य भट्टनायक और अभिनव गुप्त के मत को ही आधार बना कर धनंजय ने साधारणीकरण की अवधारणा में एक और तत्व–कवितत्व का समावेश किया। धनंजय के अनुसार नाटक देखने या काव्य–पाठ से सामाजिक या सहृदय के सामने रामादि ऐतिहासिक पात्र न बने रहकर कवि–निर्मित पात्र बन जाते हैं। इस तरह सामाजिक या सहृदय के मन से ऐतिहासिक रामादि के प्रति पूज्य भाव में कमी आ जाती है और वह कवि निर्मित पात्रों के माध्यम से रसास्वादन करता है। परन्तु उनके इस मत में कवितत्व की परिकल्पना के अलावा कुछ भी विशेष दिखाई नहीं देता।

5. आचार्य विश्वनाथ

आचार्य विश्वनाथ ने स्थायीभाव, विभावादि का भी साधारणीकरण माना है–

साधारण्येन रत्यादिरपि तद्वद् प्रतीयते।
परस्य न परस्येति ममेति न ममेति च।
तदास्वादे विभावादेः परिच्छेदो न विद्यते।[8]

अर्थात् स्थायी भाव रति आदि भी काव्य में सामान्य रूप में प्रतीत होते हैं। रसास्वाद के समय विभावादि का ये मेरे हैं अथवा मेरे नहीं हैं, अन्य के हैं अथवा अन्य के नहीं हैं– इस प्रकार विशेष रूप से परिच्छेद अर्थात् संबंध–विशेष का स्वीकार या परिहार नहीं होता।विश्वनाथ मानते हैं कि यही साधारणीकरण विभावादि का विभावन–व्यापार इसी के कारण उस समय प्रमाता अपने को समुद्रलंघन करने वाले हनुमान आदि से अभिन्न समझने लगता है। इस तरह उनके अनुसार साधारणीकरण के प्रभाव से प्रमाता का आश्रय के साथ तादात्म्य हो जाता है।

6. पंडित जगन्नाथ

पंडित जगन्नाथ मानते हैं कि न तो साधारणीकरण जैसी कोई वस्तु है और न ही किसी का किसी के साथ साधारणीकरण होता है। पंडित जगन्नाथ ने भले हीी साधारणीकरण का निषेध किया है, परन्तु यदि ध्यान से देखा जाए तो यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने भी आश्रय के साथ प्रमाता के तादात्म्य व सहानुभूति को स्वीकार किया है और उन्होंने साधारणीकरण के स्थान पर भावना दोष शब्द का प्रयोग किया है।[9]

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

पंडित जगन्नाथ के उपरान्त संस्कृत आचार्यों द्वारा काव्यशास्त्र–विवेचन की परम्परा समाप्त सी हो गई। इसके उपरान्त रीति कालीन आचार्यों ने भी संस्कृत आचार्यों का ही अनुसरण करते हुए केवल उन के विचारों का हिन्दी अनुवाद ही किया। साधारणीकरण जैसे तात्विक विषयों में उनकी कोई रुचि नहीं थी। इस तरह लगभग तीन शताब्दियों तक इस महत्व पूर्ण विषय पर कोई विशेष चर्चा नही हुई। बीसवी शताब्दी में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सन् 1933 में द्विवेदी–अभिनन्दन–ग्रंथ में एक लेख प्रकाशित किया जिसका शीर्षक था– साधारणीकरण और व्यक्ति–वैचित्र्यवाद। इस लेख के माध्यम से उन्होंने साधारणीकरण की अवधारणा का नया स्वरूप सामने रखा।[10]

आचार्य शुक्ल आलम्बन का साधारणीकरण मानते हैं। उनके अनुसार आलम्बन का अर्थ है– भाव का विषय। सबसे पहले आलम्बन कवि के भाव का विषय बनता है, उसके बाद वह समस्त सहृदयों के भाव का विषय बन जाता है, परन्तु आचार्य शुक्ल ने इस तथ्य को भी स्वीकार किया है कि साधारणीकरण में आलम्बन का व्यक्तित्व तिरोहित नहीं होता है, बल्कि उसके व्यक्तित्व में ऐसे गुणोंका समावेश हो जाता है, जिनके कारण वह समस्त सहृदय पाठकों या श्रोताओं के उसी भाव का विषय बन जाता है। यहां यह प्रश्न उठता है कि आलम्बन का व्यक्तित्व बना रहे और फिर भी उसका साधारणीकरण हो जाए– यह कैसे संभव है? उनके अनुसार स्पष्टीकरण करते हुए कहा है कि साधारणीकरण वस्तुतः आलम्बन–धर्म का होता है। तथा काव्य का विषय विशिष्ट होता है, तथा काव्य का आस्वादन भाव की सामान्य भूमिका पर होता होता है।

2 आचार्य केशव प्रसाद मिश्र

आचार्य केशव प्रसाद मिश्र ने आचार्य शुक्ल के मत की आलोचना की। उन्होंने उनके मत को भट्टनायक के भुक्तिवाद से प्रभावित माना। उनके अनुसार साधारणीकरण तो कवि अथवा भावुक की

चित्तवृत्ति से संबध रखता है। इनका मत वास्तव में आचार्य अभिनव गुप्त के ध्वनिवाद से प्रभावित प्रतीत होता है।

3 डॉ. श्याम सुन्दर दास

इनके अनुसार कवि और पाठक की चित्तवृत्तियों का एकतान एकलय हो जाना ही साधारणीकरण है। उनका यह मत आचार्य शुक्ल के मत से मेल खाता है।

4 आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी

इनके अनुसार साधारणीकरण का अर्थ रचयिता और उपभोक्ता अर्थात् कवि और दर्शक के बीच भावना का तादात्म्य है। साधारणीकरण वास्तव में कवि–कल्पित समस्त व्यापार का होता है, केवल किसी पात्र–विशेष का नहीं। दूसरे शब्दों में वाजपेयी का कहना है कि साधारणीकरण का अर्थ है– दर्शक या पाठक का कवि की भावना तक पहुंचना।

5 डॉ. नगेन्द्र

डॉ. नगेन्द्र ने पूर्व आचार्यों के मतों की समीक्षा करते हुए साधारणीकरण को इस प्रकार परिभाषित किया है– साधारणीकरण कवि की अपनी अनुभूति का होता है। अर्थात् कोई व्यक्ति अपनी अनुभूति को इस प्रकार अभिव्यक्त कर सकता है कि वह सभी हृदयों में समान अनुभूति जगा सके, तो पारिभाषिक शब्दावली में हम कह सकते हैं कि उसमें साधारणीकरण की शक्ति वर्तमान है। उनके अनुसार मेघनादवध में कवि की सहानुभूति रावण के साथ है तो रामचरितमानस में कवि की सहानुभूति राम के साथ है तथा रावण के प्रति घृणा का भावस्वयं ही जागृत हो जाता है। इस तरह साधारणीकरण का अर्थ है– कवि की अनुभूति का साधारणीकरण। कवि अपनी अनुभूति के साथ अपना रस भी सहृदय के पास भेजता है। अतः रस की स्थिति सहृदय के हृदय में मानना उतना ही अनिवार्य है, जितना सहृदय में हृदय मानना।[11]

इस तरह यह तो स्पष्ट है कि इस संबध में अधिकांश विद्वानों में मतभेद रहा है। अब प्रश्न यह उठता है कि साधारणीकरण किसका होता है– रस अवयवों का या कवि की अनुभूतियों का। यहां डॉ नगेन्द्र का मत समीचीन लगता है कि अनुभूतियों का ही साधारणीकरण होता है, परन्तु प्रश्न उठता है कि कवि की अनुभूतियां किस प्रकार सब सहृदयों की अनुभूतियां बन जाती हैं। इसके उत्तर में नगेन्द्र का कहना है कि मूलतः सम्पूर्ण मानवता एक चेतना से चैतन्य है। मानव–मानव के हृदय में चेतना का एक ऐसा तार अनुस्यूत है, जो एक स्थान पर भी स्पर्श पाकर समग्रतः झंकृत हो जाता है।

सारांशतः कहा जा सकता है कि साधारणीकरण में–कवि, सहृदय, तथा कवि की अनुभूति, ये तीन तत्व महत्वपूर्ण हैं। कवि की भावमय भाषा और भावसंवेदन शक्ति ही सहृदय के चित्त में स्थित भाव–शक्ति को जगा देती है, जिससे वह काल व स्थान से चेतनामुक्त होकर रस का आस्वादन करता है। इस समूची प्रक्रिया को ही साधारणीकरण कहना उचित होगा।

सन्दर्भ सूचि

1. डॉ. नगेन्द्र — साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद पृ 17
2. आचार्य भरत मुनि — नाट्य–शास्त्र पृ. 123
3. उपरोक्त — पृ. 95
4. भट्ट नायक — काव्यप्रदीप पृ. 74
5. अभिनव गुप्त — अभिनव भारती पृ. 34
6. उपरोक्त — पृ. 84
7. उपरोक्त — पृ. 112
8. आचार्य विश्वनाथ — साहित्यदर्पण पृ. 134
9. पंडित जगन्नाथ — रसगंगाधर पृ. 164
10. डॉ. नगेन्द्र — साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद पृ. 05
11. उपरोक्त — पृ. 07